International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 914-915

उच्च शिक्षा की दिशा और उद्देश्य

डॉ. मंजु सांगवान
सहायक प्रवक्ता, हिंदी विभाग, महिला महाविधालय, झोझू कलां, चरखी दादरी, हरियाणा, भारत।

प्रस्तावना

स्वतंत्र भारत में उच्च शिक्षा का विस्तार व्यापक स्तर पर हुआ हैं लेकिन क्या यह हमारे देश की उच्च शिक्षा छात्रों को जीवन दृष्टि देने में या उनकी भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सफल हुई हैं यह एक बड़ा प्रश्न हैं देश की उच्च शिक्षा को शिक्षा की मूलभूत संकल्पना के साथ आधुनिक आवश्यकताओं के अनुसार ढलना होगा, इस हेतु इसके अनुरूप पाठ्यक्रम, पाठ्यचर्या की रचना हो शोधकार्य को बढ़ावा देने, शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ाने, देश की शिक्षा मूल्य आधारित बने, शिक्षा स्वायता हो, शिक्षा की आर्थिक व्यवस्था कैसे हो इन सब चिंतनीय विषयो पर इस प्रारूप के माध्यम से सुझाव देने का प्रयास किया हैं।

भारत में उच्च शिक्षा का, जहां तक उसकी मात्रा का प्रश्न हैं, काफी निरन्तर विस्तार हुआ हैं! विश्वविधालयों और महाविधालयों की संख्या कई गुना बढ़ गई हैं तकनीकी कॉलेजों और संस्थानों की संख्या में भी खूब इजाफा हुआ हैं, उच्च शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्र छात्राओं की संख्या में भी अच्छी खासी वृद्धि हुई हैं, लेकिन इस विस्तार के बावजूद हमारी शिक्षा गुणात्मक दृष्टि से अभी भी बहुत पिछड़ी हुई हैं विदेशो में हमारी उच्च शिक्षा को काफी हेय दृष्टि से देखा जाता हैं, जबकि रोचक बात यह हैं, की हमने पाश्चात्य शिक्षा पद्धति को ही अपनाया हुआ हैं।

आज के भूमंडलीयकरण के युग में विश्व समुदाय के बीच उच्च शिक्षा की महत्ता बढ़ती जा रही है, उच्च शिक्षा पर हाल में अमेरिकन इंस्टीट्यूट ऑफ इंटरनेशनल एजुकेशन की वार्षिक रिपोर्ट 'ओपिन डोर 2008' इस बात की और इशारा करती है कि अभी भी उच्च शिक्षा में भारत को वैश्विक केंद्र बनाने में बहुत समय लगेगा! हमारे देश की उच्च शिक्षा का स्तर बहुत गिरा हुआ है! विश्वविद्यालयों के चुनिंदा 300 विश्वविद्यालयों में भारत का एक भी विश्वविद्यालय न होना इस बात का प्रमाण है की स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सरकारों ने युवाओ को गुणवता पूर्ण उच्च शिक्षा प्रदान करने की दिशा में विशेष रूचि नहीं दिखाई है, आज देश में उच्च शिक्षा के जितने भी केंद्र है! वे देश के युवाओ के 10: हिस्से को भी शिक्षित करने में सक्षम नहीं है, वर्तमान में विश्वविद्यालयों से स्नातक की उपाधि लेकर निकलने वाले युवाओ में 8–9 : ही अच्छी नौकरियाँ प्राप्त करने के योग्य होते है, अर्थात 90 : स्नातक देश की विकास में उपयुक्त योगदान देने में असमर्थ है, जबकि यह सर्वविदित है कि विकसित देशो के विकास में उच्च शिक्षा के ढांचे में महत्वपूर्ण भूमिका शिक्षित युवाओ ने ही अदा की है। शिक्षा के सुधारने के लिए गठित समितियों की सिफारिशों के बावजूद आज देश के युवाओ को 10% हिस्से को भी शिक्षित करने में सक्षम नहीं है, क्या इस सबके पीछे राजनैतिक संकल्प की कमी नहीं दिखाई देती।

लेकिन यदि हम उच्च शिक्षा के उद्धेश्यों के प्रकाश में आज की शिक्षा का स्वरूप देखे तो निराशा ही हाथ लगेगी! आज का उच्च शिक्षा प्राप्त युवक भारत की प्राचीन ज्ञान विज्ञान की धरोहर को बिना समझे बुझे उसकी मजाक उड़ाते देखा जा सकता है, व्यावहारिक और व्यावसायिक शिक्षा पर आज बल जरूर दिया जा रहा है किन्तु इससे बेरोजगारी बजाए घटने के और बढ़ती जा रही है!

आजकल देश में उच्च शिक्षा की कमियों को दूर कर उसमे गुणवत्ता लाने की चर्चा बड़े जोरो पर है इसके लिए अनेक स्तरो पर तरह तरह की कवायद की जा रही है, परन्तु इस प्रयास के लिए अपनाए गए संदर्भ और मानक हमारे अपने नहीं है गुणवत्ता के सरोकार के बारे में हमारा ध्यान उन अंतर्राष्ट्रीय मानदंडों की और ही जा रहा है, जो अन्यत्र देश कल के संदर्भ में ठीक हो सकते है, लेकिन यह जरूरी नहीं की वे हर जगह ठीक हो! बावजूद इसके लगभग उन्ही को पृष्टभूमि में रख कर गुणवत्ता की पैमाइश की जा रही है और उनके मानको पर संतुष्ट होने पर शिक्षण संस्थाओं को ए0बी0सी0डी0 ग्रेड दी जा रही है प्राध्यापकों की पदोनन्ति में एपी आई की गणना हो रही है! और इसके चलते आजकल शिक्षा संस्थानो में हम शोध, संगोष्ठी और प्रकाशन की तत्वहीन मारामारी का अदत नजारा देखने को बाध्य हो रहे है! गुणहारी शोध पत्रिकाओं की भीड़ लग रही है और शोध में नकल और चोरी की घटनाएँ दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है शिक्षा के परिसर में आज पढ़ने आने वाला युवा विधार्थी नहीं, बल्कि अच्छे परीक्षार्थी बनने के लिए ही यत्नशील रहता है सफलता यानि अच्छे अंक पाने पर उसका जोर निरंतर बढ़ता जा रहा है ट्यूशन या कोचिंग की जरुरत और उसकी बढ़ती व्यावसायिक गिरफ्त को देखने से यही लगता है की प्रचलित शिक्षा अधूरी, दोषपूर्ण और अपर्याप्त है इसलिए सही अर्थों में व्यक्तित्व और कुशलता की वृद्धि की दृष्टि से अव्यावहारिक है

हम देख रहे है की उच्च शिक्षा किस तरह संचालित हो रही है और किस मुकाम पर पहुंच रही है यह किसी भी तरह संतोषजनक नहीं है हम अपने विश्वविधालयों की तुलना हॉवर्ड, ऑक्सफोर्ड और ऍमआईटी जैसी विदेशी संस्थानो से करना चाह रहे है, उनकी ही तर्ज पर जाँच –परख करने पर हमारे श्रेष्ठ विश्वविद्यालय या उच्च शिक्षा के अन्य संस्थान फिसड्डी ही साबित होते है और हम अंतराष्ट्रीय रैंकिंग की सूची में कही ठहरते ही नहीं है सूची में ऊपर आने के लिए जो निष्कर्ष तय किये गए है वे कुछ सार्वभौम पैमाने को हमारे सामने रखते है मसलन छात्र संख्या, कक्षा में छात्रो और अध्यापक के बीच का अनुपात, संस्था की प्रतिष्ठा, विदेशो के साथ संबंध, अंतराष्ट्रीय प्रकाशनो की संख्या इत्यादि यदि गौर से देखे तो इनमे कई निष्कर्ष हमारे भारतीय समाज के लिए असमान्य है और प्रासंगिकता की दृष्टि से एक हद तक संदिग्ध भी, लेकिन हम उन्हें अपनाने के लिए अंधी और अंतहीन दौड़ में शामिल हो रहे है, यह हम विभिन अंतर्राष्ट्रीय संगठन प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से दिशा – निर्देश देते है जिनके अनुसार निति निर्धारण किया जाता है।

कौन से विषय आगे बढ़ेगे और उन्हें किन मुद्दों पर शोध के लिए क्या सहायता मिलेगी ? यह सब उन्ही नीतियों पर निर्भर करता है न की स्थानीय दशाओ या क्षमताओ के ऊपर स्वायत्तता प्राप्त नहीं है उनके ऊपर तमाम बंधन दर बंधन की ऐसी झड़ी लगी है की विश्वविधालय हर बात के लिए मुँह देखता है और सरकारी आदेश की बाट जोहता है! सरकार का तन्त्र हावी है! और नौकरीशाही का प्रभाव शेक्षिक प्रशासन को दूषित और बाधित कर रहा है! ऐसे में हर चीज अपनी जगह स्थिर है, गतिहीन है!

भौतिक या प्राकृतिक विज्ञानों, समाज विज्ञानों और मानविकी के विभिन्न विषयो को एक ही तराजू से नहीं तोला जा सकता! इन सब में ज्ञान की प्रकृति और उनके निर्माण और प्रयोग में सांस्कृतिक सन्दर्भ की प्रासंमिकत्ता अलग – अलग है अब उसमे कौशल विकास भी जुड़ा रहा है, ज्ञान का उत्पादन भी! और उपनिवेशवादी दौर के बाद साम्राज्वादी मानसिक चिंतन से आजादी आवश्यक है! आज अनुकरण की इच्छा बदलती है और हम बिना सोचे समझे जो कुछ भी कहि भिन्न दीखता है, अपनाने दौड़ते है! ' उनके पास है तो हमारे पास क्यों न हो ' इस तर्क का अनुसरण करते हुए अपने को पश्चिमी विशवविधालयो का क्लोन बनाते जा रहे है! पर्तिस्पर्धा जीवन की धुरी बनती जा रही है! इस प्रकिर्या में पूंजीवाद ही एक मात्र मार्ग दर्शक है! विशवविधालय भी औधोगिक संस्थाओं का संचालन औधोगिक संगठन या घरानों की तर्ज पर हो रहा है! इस मॉडल का शिक्षा की गुणवत्ता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है! भारतीय संविधान में न्याय, स्वतंत्रता, समता और बंधुत्व की चर्चा है! इसमें जिस मनुष्य की संकल्पना की गयी है वह उच्च शिक्षा केन्द्रो से एक भिन्न्न तरह के मानस के निर्माण की अपेक्षा करता है! लेकिन आज जिस तरह क्वालिटी को क्वॉन्टटी में बदलने की कोशिश हो रही है! उस से कई खतरे पैदा हो रहे है और गुणवत्ता को नुकसान पहुँच रहा है!शिक्षा को एकरूपी नहीं होनी चाहिए! सिखाने वाला ऐसा संगठन हो जो स्वतंत्रता पर बल दे! उसे बदलाव के लिए तत्परता होना चाहिए! तभी रचनाशीलता आ सकेगी! उसे ''रिजिड '' नहीं होना चाहिए! शैक्षिक संस्थान वस्तु नहीं पैदा करते वे मनुष्य रचते है! और ज्ञान के द्वारा उसका परिष्कार और परिमार्जन करते है! हमे विचार करना चाहिए की उच्च शिक्षा का उद्देश्य क्या है ? हम किस तरह के मनुष्य की परिकल्पना क्र रहे है ? हर शिक्षा संस्थान अपनी शक्ति और विशिष्टता के साथ उन क्षेत्रो को रेखांकित करे जिनमे प्रमाणिक रूप से उसके द्वारा योगदान संभव है! उसका उधम यदि उस क्षेत्र विशेष में केंद्रित हो तो बात बन सकती है! मोठे तौर पर कह सकते है की गुणवत्ता शिक्षा की यह स्वभाविक अपेक्षा होती है की उसमे छात्र और अध्यापक दोनों ही ज्ञान की प्रक्रिया के साथ गहराई से जुड़े! गुणवत्ता की तलाश के लिए दरकार है आंतरिक पुनराविष्कार की!

संदर्भ

1. http//www.bhartiyashiksha.com/?p=379
2. दैनिक जागरण 12 मई 2016
3. (लेखक प्रो0 गिरीश्वर मिश्र, महात्मा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविधालय, वर्धा के कुलपति हैं।